RJPP, Vol. 14, No. 1, 2016, ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411

राजधर्म पर भारी, धर्म और जाति के आधार पर राजनीति

डा.विनोद कुमार*

सुनीता रानी**

राजनीति में धर्म का होना जरूरी है और वो धर्म, राजधर्म है। इसमें हिन्दू, मुसलमान, जैन, बौद्ध, ईसाई, सिख का कोई प्रश्न नहीं, मानवता के नियमों पर चल कर राष्ट्र की सेवा सच्चे अर्थ में की जा सकती है और देशवासयों को सुखी बनाया जा सकता है। राजनीति में या सरकार के कामकाज में राजधर्म के नियमों का पालन करना ही धर्मनिरपेक्ष सरकार बनाना है।

सोचनीय है कि एक ओर धर्म व जाति के आधार पर भेद—भाव समाप्त करने की बात कही जाती है और दूसरी ओर धर्म व जाति के आधार पर राजनीति की जाती है। विचारने पर तो यही बात सामने आती है कि धर्म व जाति के आधार पर समाज को बांटने का कार्य करने में सबसे ज्यादा हाथ हमारी यह धर्म व जाति के आधार पर के राजनीति व्यवस्था है। यह कोई कोरी बहस नहीं है बल्कि सौ फीसदी सही है। आप खुद देख सकते हैं कि हमारे समाज में किसी भी जाति के लोगों को एक जगह रहने में या अपना व्यापार करने में कोई दिक्कत नहीं है। पर हमारी कानून की क्या व्यवस्था है? कानून कि व्यवस्था है कि जाति प्रमाण पत्र ले आओ तो यह सुविधा मिलेगा....... तो फलां जाति के लिए इतना आरक्षण तो फलां जाति के लिए इतना आरक्षण..........आप खुद देखें कि सरकार व कानून ने समाज को जाति के आधार पर कितने वर्गों में बांटा है...... फरवर्ड, बैकवर्ड, पिछड़ा वर्ग, अन्यन्त पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति , दलित, महादलित....... आप कहेंगे कि जाति की व्यवस्था हमारे समाज में पहले से ही है और वहाँ इससे भी अधिक बहुतों जातियां हैं। पर आप खुद सोचें कि हमारे समाज में एक शादी को छोड़ कर अन्य कहीं भी जाति को लेकर किसी को रहने या कार्य करने में कोई दिक्कत नहीं है। हाँ, पहले हमारे समाज में जातिवाद था पर अब समाज इसे छोड़ रही है पर अफसोस कि अब हमारे सरकार की जाति व धर्म पर आधारित आरक्षण व्यवस्था इसे बढा रही है।
सरकार कहती है जाति—पाती हटाओ। कानून कहता है जाति प्रमाण पत्र ले आओ..

॥ क्या यह षडयंत्र है। नहीं यह लोकतंत्र है॥

भारतीय लोकतंत्र की सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि यहाँ की आधी से भी ज्यादा आबादी, जाति और धर्म के आधार पर वोट करती है। ऐसे में सबसे बड़ा सवाल यह है कि 64 साल के गणतंत्र के बाद भी आखिर क्या कारण है कि भारत से जाति और धर्म पर आधारित राजनीति खत्म नहीं हो पा रही है। इसके लिए अगर कोई जम्मिेदार है तो मतदाताओं की सोच, खास कर ग्रामीण क्षेत्रों के मतदाता लोग इस तरह की मानसिकता से पीडित है। एक तो उनके अंदर जागरूकता और सही जानकारियों का अभाव होता है और उनकी इन्ही कमजोरियों का फायदा उठाकर राजनीतिक दल उन्हें जाति और धर्म के आधार पर विभाजित कर अपनी राजनीतिक रोटियाँ सेकते रहतें हैं। शहरी क्षेत्रों में भी ऐसी समस्या है किंतु उसका अनुपात काफी हद तक कम है।

**गेस्ट फैकल्टी,विभाग-समाजशास्त्र,इंद्रप्रस्थ कॉलिज मेरठ*

कभी – कभी ऐसी स्थिति पैदा कर दी जाती है कि ना चाहते हुए भी लोग धर्म और जाती के आधार पर वोट करने को मजबूर हो जाते हैं। चुनाव से पहले राजनीतिक पार्टियाँ अपने मेनिफेस्टों में कुछ इस तरह की लोक – लुभावने वादें कर देती है, जिसका लाभ किसी एक धर्म या सम्प्रदाय के ही लोगों को मिलता है, ऐसे में उस धर्म या सम्प्रदाय के लोगों का वोट उस राजनीतिक दल को ही जाना तय हो जाता है। और ऐसी स्थिति लोकतंत्र की परिभाषा में दरार पैदा करती है।

राजनीति में जाति जोड़ो रैलियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इन रैलियों की ताकत का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि ये रैलियां सत्ता के समीकरण ही नहीं बदलती हैं, बल्कि तख्ता भी पलट देती हैं। जाति जोड़ो के नाम पर समाज को तोडने वाले नेताओं की उत्तर भारत में भरमार है।

वोट बैंक की राजनीति है... सरकार ही जिम्मेदार है पूरी तरह से वरना किसके पास समय है मँहगाई, भूखमरी और बेरोजगारी से निपटने के बाद इन सब बातों के लिए. सही है, आरक्षण की व्यवस्था पिछड़ों को ऊपर उठाने और यह भेद समाप्त करने के लिए हुई थी। लेकिन दवा ही मर्ज बन गई है। इस दवा का बंद होना निहायत जरूरी है। बीमारी के लिए कोई नया इलाज तलाशना चाहिए।

जाति–प्रथा का मूलाधार जन्म है। जाति प्रथा के कारण हिन्दू समाज असंख्य इकाईयों में बट गया। डा. बी. आर. अंबेडकर के अनुसार जाति–विद्वेष के कारण हिन्दू कभी एक होकर नहीं रह सके न ही उनमें सामाजिक चेतना का संचार हुआ। अंबेडकर तथा गाँधी दोनों ही दलितों के उद्धार के पक्षधर थे, किन्तु वर्ण–व्यवस्था के सम्बन्ध में दोनों में मतभेद था। गाँधी पुनर्जन्म तथा कर्मफल में विश्वास रखते थे। किन्तु अम्बेडकर ने इस दर्शन को अस्वीकार कर दिया। उन्होंने अपनी पुस्तक **''जाति–प्रथा का उन्मूलन''** में हिन्दू समाज के दोषों पर प्रकाश डाला तथा जाति–व्यवस्था को बुरी व्यवस्था मानते हुए उसके उन्मूलन का सुझाव दिया। इतना ही नहीं, उन्होंने शास्त्रो को नष्ट करने पर भी बल दिया।

संविधान के मुताबिक भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है जहां कई मतों को मानने वाले लोग रहते है लेकिन लगता है कि कथनी और करनी से देश धर्मनिरपेक्ष नहीं है। आरोप लगता रहा है कि देश को सांप्रदायिकता की आग में झोंकने वाले और कोई नहीं बल्कि सियासी पार्टियां है। यही राजनीतिक सांप्रदायिकता धर्मनिरपेक्षता के लिए संकट पैदा कर रहा है। मुजफ्फरनगर में दंगे की आग बुझ गई है लेकिन राख में भी वोट तलाशने की कोशिश जारी है। दंगे के 10 दिन बाद प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह, कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी और कांग्रेस उपाध्यक्ष राहुल गांधी दंगों के जख्म पर मरहम लगाने पहुंचे थे मुजफ्फरनगर और एक दिन पहले मुख्यमंत्री अखिलेश यादव भी हो आए हैं। दंगे के बाद जो सरकारी रस्मो रिवाज होते हैं वो अदा कर आए हैं। अटल बिहारी गुजरात दंगे के दौरान मोदी को राजधर्म निभाने की नसीहत दी थी उसी तरह प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने अखिलेश यादव की सरकार को नसीहत देते हुए कहा है कि जान की हिफाजत सरकार का फर्ज है लेकिन प्रधानमंत्री और कांग्रेस पार्टी की मुखिया सोनिया गांधी और राहुल गांधी खुद फर्ज भूल गये और भेदभाव कर बैठे। ये लोग एक सम्प्रदाय के लोगों से मिलने तो गये तो दूसरे सम्प्रदाय के लोग से मिलना मुनासिब नहीं समझा यानि कांग्रेस पार्टी भी फर्ज

निभा रही है, समाजवादी पार्टी भी फर्ज निभा रही है वहीं बीजेपी भी पीछे नहीं है लेकिन सवाल ये उठता है कि धर्मनिरपेक्षता को मजबूत करने के लिए आजादी के बाद क्या फर्ज निभाया गया, क्या जतन किए गये ताकि देश में दंगे नहीं हो और नफरत पैदा नहीं हो। समाजवादी पार्टी कहती है कि दंगे के पीछे बीजेपी का हाथ है जबकि बीजेपी का आरोप है कि यूपी सरकार दंगे को रोकने की लिए कोई कोशिश नहीं की गई वहीं कांग्रेस कहती है कि सपा और बीजेपी में मिली भगत है लेकिन जनता को मालूम है कि ये पार्टियां वोट के लिए नूराकुश्ती कर रही है। जनता भी दंगे के लिए कम जिम्मेदार नहीं है क्योंकि दंगे करके जनता ही राजनीतिक पार्टियों को राजनीति रोटी सेकने का मौका देती है। मुजफ्फरनगर में जो हो रहा है वो बेहद दुखद और शर्मनाक है।

ये पार्टियां धर्म और जाति देखकर मरहम लगाने की कोशिश कर रही है। भले इससे राजनीतिक पार्टियों का भला तो हो जाएगा लेकिन देश का भला नहीं होने वाला है। सवाल ये उठता है कि इस दंगे से देश, सरकार और पार्टियां क्या सबक लेने की कोशिश की है जवाब तो यही लग रहा है कुछ नहीं आखिरकार देश में दंगे क्यों होते हैं? दरअसल कारण होता है चुनाव का और यूपी में सभी पार्टियों की पैनी नजर है. वोट के खेल में कोई पार्टी पीछे नहीं रहना चाहती है चाहे देश में कत्लेआम पर क्यों नहीं राजनीति करनी पड़े लेकिन ईमानदारी से कोई भी पार्टी ये जानने की कोशिश नहीं कर रही है दंगे क्यों हो रहे हैं और दंगे की खाई को पाटने के लिए अभी तक क्या किया गया है। उल्टे वोट के लिए दो समुदायों के बीच विभाजन रेखा खींची जा रही है। ये देश तबतक पूरी तरह सेक्युलर नहीं हो सकता है जबतक सोच और नजरिया बदलने की कोशिश नहीं की गई। कांग्रेस और सपा, बीजेपी को कहती है कि सम्प्रदायिक पार्टी है जबकि दोनों के दामन खुद साफ नहीं है। कांग्रेस को लगता है कि दंगे के बाद मुस्लिम वोटर सपा से नाराज है और उसका फायदा कांग्रेस को मिल सकता है. वहीं बीजेपी की नजर भी हिंदू वोट है. इस खेल में भले कांग्रेस और सपा अपने आप को सेक्युलर पार्टी कहती है लेकिन लगता है कि सेक्युलर के नाम पर सिर्फ मुखौटा है। क्या सपा को इस दंगे का दर्द है जिसकी पूरी जिम्मेदारी थी दंगे रोकने का लेकिन दंगे के अगले दिन ही अखिलेश यादव टोपी में प्रतिक्रिया देते नजर आए वहीं इसी दौरान आगरा में सपा की बैठक हो गई और तो और बागपत से जब सोमपाल शास्त्री सपा के टिकट से चुनाव लड़ने से मना कर दिया तो सपा वहां से दूसरे उम्मीदवार की घोषणा में देरी नहीं की. वहीं सपा के कुछ नेता पाला बदलकर बीजेपी में आने वाले हैं। इन्हें लगता है कि सपा में रहकर पश्चिमी उत्तर प्रदेश से चुनाव नहीं जीता जा सकता है वहीं अपनी बिरादरी की नाराजगी का भी डर है। दंगे रोकने की मंशा है या नहीं? दो समुदायों के बीच उत्पन्न तनावग्रस्त स्थिति में देश की प्रगति संभव नहीं है।

साम्यवादी चिंतक **कार्ल मार्क्स** ने धर्म को यूं ही अफीम नहीं बताया था। सत्ता भी अफीम से कम नहीं है। सत्ता की लत लग जाए तो लाश पर भी राजनीति करने से परहेज नहीं करते हैं। देश में कई धर्म हैं लेकिन हिंदू– मुस्लिम के बीच अक्सर दंगे होते रहते हैं। दो धर्म के बीच खाई भी है उस खाई को कम करने की कोशिश नहीं की गई है चूंकि वोट की राजनीति आड़े हाथ आ जाती है। आरोप है कि मदरसे में नफरत फैलाई जाती है तो कहीं आरएसएस के स्कूल में राष्ट्रवाद का ओवरडोज दिया जाता है इस पर सरकार की साफ निगरानी नहीं है। सरकार को मालूम है कि वहां पर क्या हो रहा है लेकिन सरकार हाथ पर हाथ रखकर मूदर्शक बनी हुई है। माने या ना माने धर्म के नाम पर दो

समुदायों के बीच दीवार खींची हुई है तभी तो इस देश में आतंकवादी को भी पनाह मिल जाती है। भले ही दो समुदायों के बीच गिनती के ही लोग नफरत फैलाते हो लेकिन दंगे की आग में प्रभावित होता है पूरा देश , दंगे के रोकने का काम सरकार और प्रशासन का है लेकिन जवाबदेही नहीं बल्कि लापरवाही से पेश आते हैं इसके पीछे भी सरकार की कारगुजारी है. देश एक है लेकिन यहां पर नियम कायदे, कानून और रीति रिवाज अलग है जब तक राष्ट्रीयता का भाव नहीं जगेगा तब तक नफरत की आग को रोकना संभव नहीं है। अब समय आ गया है कि सरकार को इससे निपटने के लिए कड़े कानून बनाने पड़ेंगे अगर इसका निदान नहीं किया गया तो राजधर्म पर राजनीति भारी पड़ सकती है।

जड़ प्रकृति के पिंडों के बीच जिस प्रकार आकर्षण और प्रतिकर्षण के दो बल सर्वदा एक साथ क्रियाशील रहते हैं जिनके कारण उनके बीच एक संतुलन बना रहता है, ठीक वैसे ही आकर्षण और प्रतिकर्षण के दो बल चेतन प्रकृति के जीवों के बीच भी सदा क्रियाशील रहते हैं जो सृष्टि चक्र में संतुलन बनाए रखते हैं।
यहाँ हम समस्त जीवों के बजाय यदि केवल मानव समाज के संदर्भ में ही इस सिद्धांत की चर्चा करें, तो इस गुत्थी को बेहतर समझ सकेंगे। और जब इस गुत्थी को समझ लेंगे तो समकालीन समस्याओं के व्यावहारिक हल तलाशना भी सुगम होगा।

मानव चेतना भी आकर्षण और प्रतिकर्षण के इन दो बलों के परस्पर द्वन्द्व से संचालित होती है। आकर्षण का जो बल दो मनुष्यों की चेतना को आपस में जोड़ता है उसे "धर्म" कहते हैं, और प्रतिकर्षण का जो बल दो मनुष्यों की चेतना को एक–दूसरे से दूर करता है, उसे "अधर्म" यानी आधुनिक अर्थों में "राजनीति" कहते हैं।

धर्म की बुनियाद है, प्रेम, लगाव, समानता। इसके विपरीत अधर्म यानी राजनीति की बुनियाद है दृ टकराव, अलगाव, भिन्नता। जो प्रेरक भाव हमें एकत्व की ओर ले जाता है, एक–दूसरे से जुड़ने के लिए उत्साहित करता है, वही धर्म है। और, जो भाव हमारे भीतर अपनी विशिष्टता की अलग पहचान का आग्रह भरता है, अपने को दूसरे से बेहतर, महत्तर जताने, एक–दूसरे से आजाद करने के लिए सचेष्ट करता है, वही राजनीति है।
यदि आप "धर्म", "अधर्म" और "राजनीति" शब्दों के पारंपरिक अर्थों के बजाय उन्हें सर्वथा नवीन संदर्भ में ग्रहण कर सकें तो इसे बेहतर समझ सकेंगे।
सामाजिक गतिकी में संतुलन के लिए धर्म और राजनीति, दोनों का एक साथ सम्यक अनुपात में सक्रिय होना अपरिहार्य है। **डॉ. राममनोहर लोहिया** इसे दूसरे तरीके से कहते थे, "राजनीति अल्पकालीन धर्म है और धर्म दीर्घकालीन राजनीति"। समाज केवल धर्म के सहारे या केवल राजनीति के जरिए नहीं चल सकता। दोनों के बीच अनुपात का संतुलन आवश्यक है। जब कभी यह संतुलन गड़बड़ाता है तो समाज भयंकर समस्याओं से परेशान हो जाता है और उस संतुलन को फिर से कायम करने के लिए किसी शक्तिसंपन्न चेतना को सामाजिक द्वंद्व में हस्तक्षेप करने के लिए सक्रिय होना पड़ता है। इसी बात को गीता में श्रीकृष्ण की सर्वाधिक चर्चित अभिव्यक्ति, **"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् में भी उदघाटित किया गया है।**

महाभारत युद्ध के समाप्त होने के बाद महाराज युधिष्ठिर को भीष्म ने राजधर्म का उपदेश दिया था।

युधिष्ठर को समझाते हुए भीष्म पितामह कहते हैं– राजन जिन गुणों को आचरण में लाकर राजा उत्कर्ष लाभ करता है, वे गुण छत्तीस हैं। राजा को चाहिए कि वह इन गुणों से युक्त होने का प्रयास करें।
ये गुण निम्नवत हैं।
1. राजा स्वधर्मों का (राजकीय कार्यों के संपादन हेतु नियत कर्तव्यों और दायित्वों का न्यायपूर्वक निर्वाह) आचरण करे, परंतु जीवन में कटुता न आने दें।
2. आस्तिक रहते हुए दूसरे के साथ प्रेम का व्यवहार न छोड़ें।
3. क्रूरता का व्यवहार न करते हुए प्रजा से अर्थ संग्रह करे।
4. मर्यादा का उल्लंघन न करते हुए प्रजा से अर्थ संग्रह करे।
5. दीनता न दिखाते हुए ही प्रिय भाषण करे।
6. शूरवीर बने परंतु बढ़ चढ़कर बातें न करे। इसका अर्थ है कि राजा को मितभाषी और शूरवीर होना चाहिए।
7. दानशील हो, परंतु यह ध्यान रखे कि दान अपात्रों को न मिले।
8. राजा साहसी हो, परंतु उसका साहस निष्ठुर न होने पाए।
9. दुष्ट लोगों के साथ कभी मेल–मिलाप न करे, अर्थात राष्ट्रद्रोही व समाजद्रोही लोगों को कभी संरक्षण न दे।
10. बंधु बांधवों के साथ कभी लड़ाई झगड़ा न करे।
11. जो राजभक्त न हों ऐसे भ्रष्ट और निकृष्ट लोगों से कभी भी गुप्तचरी का कार्य न कराये।
12. किसी को पीड़ा पहुंचाए बिना ही अपना काम करता रहे।
13. दुष्टों अपना अभीष्ट कार्य न कहें, अर्थात उन्हें अपनी गुप्त योजनाओं की जानकारी कभी न दें।
14. अपने गुणों का स्वयं ही बखान न करे।
15. श्रेष्ठ पुरूषों (किसानों) से उनका धन (भूमि) न छीने।
16. नीच पुरूषों का आश्रय न ले, अर्थात अपने मनोरथ की पूर्ति के लिए कभी नीच लोगों का सहारा न लें, अन्यथा देर सबेर उनके उपकार का प्रतिकार अपने सिद्धांतों की बलि चढ़ाकर देना पड़ सकता है।
17. उचित जांच पड़ताल किये बिना (क्षणिक आवेश में आकर) किसी व्यक्ति को कभी भी दंडित न करे।
18. अपने लोगों से हुई अपनी गुप्त मंत्रणा को कभी भी प्रकट न करे।
19. लोभियों को धन न दे।
20. जिन्होंने कभी अपकार किया हो, उन पर कभी विश्वास न करें।
21. ईर्ष्यारहित होकर अपनी स्त्री की सदा रक्षा करे।
22. राजा शुद्ध रहे, परंतु किसी से घृणा न करे।
23. स्त्रियों का अधिक सेवन न करे। आत्मसंयमी रहे।
24. शुद्ध और स्वादिष्ट भोजन करे, परंतु अहितकार भोजन कभी न करे।
25. उद्दण्डता छोड़कर विनीत भाव से मानवीय पुरूषो का सदा सम्मान करे।
26. निष्कपट भाव से गुरूजनों की सेवा करे।
27. दम्भहीन होकर विद्वानों का सत्कार करे, अर्थात विद्वानों को अपने राज्य का गौरव माने।
28. ईमानदारी से (उत्कोचादि भ्रष्ट साधनों से नही) धन पाने की इच्छा करे।

29. हठ छोड़कर सदा ही प्रीति का पालन करे।
30. कार्यकुशल हो परंतु अवसर के ज्ञान से शून्य न हो।
31. केवल पिण्ड छुड़ाने के लिए किसी को सांवना या भरोसा न दे, अपितु दिये गये विश्वास पर खरा उतरने वाला हो।
32. किसी पर कृपा करते समय उस पर कोई आक्षेप न करे।
33. बिना जाने किसी पर कोई प्रहार न करे।
34. शत्रुओं को मारकर किसी प्रकार का शोक न करे।
35. बिना सोचे समझे अकस्मात किसी पर क्रोध न करे।
36. कोमल हो, परंतु तुम अपकार करने वालों के लिए नहीं।

जिस व्यक्ति के प्रति हम जुड़ाव, लगाव महसूस करते हैं उनसे एक रिश्ता बना लेते हैं या जिनके साथ हमारा एक रिश्ता होता है, उनके प्रति हम जुड़ाव, लगाव महसूस करने लगते हैं। इस तरह के रिश्ते को बगैर किसी भेदभाव के सबके साथ शिद्दत के साथ निभाने, परवान तक चढ़ाने को ही धर्म कहते हैं।

लेकिन रिश्तों के बीच, आपसी लगाव के संबंधों के बीच ही एक ऐसा कारक भी सक्रिय रहता है जो उनमें दरार डालने का, अलगाव पैदा करने का, दूरी बढ़ाने का काम करता है, जिसे राजनीति कहते हैं। यदि यह राजनीति न हो तो समाज में व्यक्तिगत स्वतंत्रता का लोप हो जाएगा और सामाजिक जीवन की गतिशीलता नष्ट हो जाएगी। हर परिवार में, हर देश में टकराव की परिस्थितियां पैदा होती रहती हैं और वे अलग–अलग भागों में विभक्त होते रहते हैं। लेकिन उनके बीच आपसी जुड़ाव के तंतु भी समानांतर रूप से सक्रिय रहते हैं। मानव समाज के अस्तित्व का विकास–क्रम तभी तक स्थायी रह सकता है जब तक मनुष्यों के बीच आपसी लगाव और अलगाव को प्रेरित करने वाले भाव संतुलित अनुपात में रहें।

समकालीन दौर में मानव समाज जिन परिस्थितियों से गुजर रहा है, उसके कारण धर्म और राजनीति के बीच का आनुपातिक संतुलन बिगड़ गया है। राजनीति प्रबल हो रही है और धर्म शिथिल हो रहा है। मनुष्यों के बीच आपसी अलगाव, टकराव बढ़ रहा है और लगाव, अपनत्व कम हो रहा है। राजनीतिक लोग यानी "दुष्कृत" लोग जनमानस में जुड़ाव, लगाव के सहज भाव को क्षोभित करके उनके बीच टकराव, अलगाव पैदा करने की चेष्टा में लगे हैं। यह सब इस समय पूरी दुनिया में, हर देश में, हर जाति में, हर वर्ग में चल रहा है।

जाति ध्रुवीकरण अपवाद :

राजनीति में जाति के आधार पर बढ़ते प्रतिनिधित्व का ही नतीजा था कि सन 1980 के चुनाव में कांग्रेस पार्टी ने नारा दिया– 'जात पर न पात पर, मुहर लगेगी हाथ पर।' इसके बाद तो राजनीति में जैसे जातिवाद को पंख ही लग गए। मंडल कमीशन के नाम से पिछड़े वर्गों को आरक्षण देने का बवंडर भारतीय राजनीति का न भूलने वाला कालखंड है। इस मंडल कमीशन के चलते ही 7 नवंबर, 1990 को वीपी सिंह की सरकार चली गई। तब तक बिहार में लालू प्रसाद यादव, रामविलास पासवान और नीतीश कुमार जैसे पिछड़ों के नेता अपना स्थान बना चुके थे। जाते–जाते वीपी सिंह बिहार में लालू प्रसाद यादव को मुख्यमंत्री बना गए। उसके बाद तो बिहार में जातिगत आधार पर ही चुनाव लड़ा जाने

लगा। लालू यादव के समय एमवाई का समीकरण खूब चला। इन्हीं दिनों लालू यादव ने 'भूरा बाल (भूमिहार, राजपूत, ब्राह्मण और लाला) साफ करो' का नारा दिया था। इस जातिगत समीकरण ने बिहार के राजनीतिक और सामाजिक संतुलन को हमेशा के लिए बदल दिया। दूसरी तरफ इन्हीं दिनों उत्तर प्रदेश में कांशीराम ने बसपा की स्थापना की और 'तिलक, तराजू और तलवार इनको मारो जूते चार। एवं 'बाभन ठाकुर लाला चोर बाकी सब है डीएसफोर।' जैसे जातिगत नारों से चुनाव लड़ा। इन दिनों अन्य राज्यों में भी जातिगत आधार पर ही चुनाव लड़े गए व टिकट बांटे गए।

The Annihilation of Caste में डा. अंबेडकर ने बहुत ही साफ शब्दों में कह दिया है कि जब तक जाति प्रथा का विनाश नहीं हो जाता, तब तक समता, न्याय और भाईचारे की शासन व्यवस्था नहीं कायम हो सकती। जाहिर है कि जाति व्यवस्था का विनाश हर उस आदमी का लक्ष्य होना चाहिए, जो अंबेडकर के दर्शन में विश्वास रखता है। यह अत्यंत रोचक है कि अंबेडकर के जीवन काल में किसी ने नहीं सोचा होगा कि उनके दर्शन को आधार बनाकर राजनीतिक सत्ता हासिल की जा सकती है।

गरीबों, दलितों, अति पिछड़े और महिलाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार सहित महंगाई, बेरोजगारी, भूमि सुधार और आम लोगों से जुड़े सवालों के जगह अगर नेताओं को जातीयता की दुकान अधिक भा रही है तो इसे जनता को ही समझना होगा कि वह इनके स्वार्थरुपी चंगूल से कैसे मुक्ति पाएं। यह तभी संभव है जब जनता इनके कारगुजारियों को समझे और इनके मंसूबों को त्याग कर देशहित में सोचे कि कैसे गरीबी व महंगाई दूर होगी बजाय जातीयता व धर्म की राजनीति से कैसे निजात पाई जाय।
भारत में लोकतंत्र है या नहीं है, सच क्या है? जब तक लोकतंत्र को गणराज्य से जोड़ने या लोकतंत्र को संसदीय सरकार से जोड़ने से पैदा हुई गलत फहमी दूर नहीं हो जाती, इस सवाल का कोई ठोस जवाब नहीं दिया जा सकता। भारतीय समाज व्यक्तियों से नहीं बना है। यह असंख्य जातियों के संग्रहण से बना है, जिनकी अलग–अलग जीवनशैली है और जिनका कोई साझा अनुभव नहीं है तथा न ही आपस में लगाव या सहानुभूति है। इस तथ्य को देखते हुए इस बिंदु पर बहस करने का कोई मतलब नहीं है। समाज में जाति–व्यवस्था समाज में उन आदर्शों की स्थापना तथा लोकतंत्र की राह में अवरोध है।

यदि सही मायने में देखें तो राजनीतिक दलों के बीच प्रतिस्पर्धा विकास के आधार पर होनी चाहिए, तभी सही मायने में लोकतंत्र भी परिभाषित होगा और की भलाई भी सही मायने में होगी।लोगों और मतदाताओं को भी ये सुनिश्चित करना ही होगा कि वो हर हाल में वैसी पार्टी को ही चुनेगें, जो विकास की राजनीती करतें हैं। महज वोट बैंक की राजनीती करने वाले उन तमाम दलों को बाहर का रास्ता दिखाना ही होगा। सभी मतदाताओं को जाति , धर्म और सम्पर्दाय से उपर उठकर देश के लिये सोचना होगा। हम सबसे पहले भारतवासी है, फिर एक हिन्दू, मुस्लिम या फिर कुछ और धर्म हैं। इसलिए हम सब को एकजुट होकर एक राष्ट्रव्यापी आवाज उठाने की आवश्यकता है।

राजधर्म, मानवधर्म की महानता है, कोई मामूली चीज नहीं है यह धर्म सब धर्मों की जड़ है। इसलिए हमारे अनेक विचारधारा रखने वाले जो इस वक्त कोई कुछ विचार कर

रहे हैं, कोई कुछ विचार कर रहे हैं, कोई कहता है धर्म राजनीति से अलग करें, कोई कहता है। धर्म राजनीति से अलग नहीं हो सकता, अपने–अपने धर्म राजनीति से जोड़ना चाहते हैं। कोई कहता है कि राजनीति में जब तक धर्म न हो, राजनीति किसी काम की नहीं। यह बड़ी भारी समस्या बनी हुई है कि धर्म और जाति को राजनीति से न जोड़ा जाए। उनके चरणों में प्रार्थना है कि राजधर्म को राजनीति से जोड़ें और जो इस समय त्रुटियां हैं उनको दूर किया जाए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- *जाघव, डॉ. नरेंद्र – ''राजनीति, धर्म और संविघान विचार'' प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली 2015.*
- *अंबेडकर, डॉ. बी. आर., 'The Annihilation of Caste ''*
- http://www.prabhatbooks.com/rajneeti-dharma-aur-samvidhan-vichar.htm
- *शर्मा, श्रीराम आचार्य, ''धर्म और विज्ञान विरोधी नहीं, पूरक हैं'' प्रकाशक –युग निर्माण योजना गायत्री तपोभूमि , 1 जनवरी , 2004.*
- *अंबेडकर, डॉ. बी. आर. ''जाति प्रथा का उन्मूलन''*
- *सिह, रामजी, ''राष्ट्रीयता धर्म और राजनीति''* Arjun publishing house , New Delhi *2010.*
- *वाजपेयी, अमित, ''भारतीय राजनीति में धर्म और जाति '' सुमित पब्लिकेशन , दरियागंज , नई दिल्ली ।*
- http://vartmanankur.com/Editorial/suresh-ghandhi,up-govt,india-govt,.php
- http://dilkiawaazkalamse.blogspot.in/2014/04/blog-post.html
- https://sites.google.com/site/dharmaurrajniti/
- https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%9C%E0%A4%A7%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%AE